Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 2, February-2019, ISSN 2230-7540

संस्कृत नाटकों में नारी

Suman*

M.A. in Sanskrit, M.Phil, Ph.D, UGC Net and JRF

सार – भारतीय नारी इतिहास का अभिन्न अंग है। नर-नारी सामाजिक जीवन रूपी रथ के दो समान महत्वपूर्ण पहिये है, जो एक के बिना दूसरा अर्पूण है। दोनों की प्रकृति और कृति भिन्न हो सकती है, लेकिन दोनों का लक्ष्य भिन्न नहीं हो सकता।

----------X----------

नारी धर्म, अर्थ एवं काम की प्रदात्री, वैभव और सौरव्य की जननी गृहलक्ष्मी का रूप और सर्वपूज्या समझी जाती थी।[1] स्त्री के जीवन से गुणित होकर पुरूष का जीवन बनता है। स्त्री को अबला कहा गया है। नारी के विभिन्न रूपों के विषय में महाकवि तुलसीदास ने कहा- "ढोल गंवार शूद्र पशु नारी सकल ताड़ना के अधिकारी" महाकवि प्रसाद ने कहा है कि - "नारी तुम केवल श्रद्धा हो" तथा मैथिलीशरण गुप्त ने कहा है- "आंचल में है दूध, आँखों में पानी" नारी की विभिन्न भावनाओं का दिग्दर्शन कर पाने में समर्थ है।

आदिकाल में नारी को पुरूष से अधिक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। किन्तु धीरे-धीरे पुरूष ने सत्ता को अपने हाथ में करके नारी का स्थान नीचे कर दिया

ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर नारी की प्रशंसा की गई है तथा उसे सौभाग्यशालिनी बताया गया है। ऋग्वेद में नारी की प्रंशसा करते हुए कहा गया है-

"उतत्वा स्त्री शशीयसी पुंसोभवति वस्यसी अदेवत्रादराधस"।[2]

वियाजानति जसुरिं वितृष्यन्तंविकामिनम्।

देवत्रावृणुतेयनः।[3]

जबकि इन्हीं ग्रन्थों में नारी की निन्दा की गई है। ऋग्वेद में नारी स्वभाव की निन्दा करते हुए कहा गया है कि स्त्रियों का मन समझाया नहीं जा सकता उनकी बुद्धि चंचल होती है।[4] ऋग्वेद में ही उर्वशी पुरूवा को समझाते हुए कहती है कि न वे स्त्रैणानि सख्यानि सन्ति सालावृकाणां हृदयान्येता।[5]

नाट्यशास्त्र में भरतमुनि ने नारी के विषय में कहा है "सर्व प्रयिण लोकोडयं सुखमिच्छति सर्वदा, सुखस्य च स्त्रियोमूलं नानाशीलधराश्च"[6]

मनुस्मृति में मनु ने नारी की प्रंशसा करते हुए कहा है-

"यत्रनार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्रं देवताः।[7]

शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि पत्नी पुरूष की आत्मा का आधा भाग है।[8] जबकि शपत ब्राह्मण में नारी की निन्दा करते हुए कहा गया है "अनृतं स्त्री शूद्रः श्वा कृष्णः शकुनिः।"[9]

महाभारत में कहा गया है-

अर्ध भार्या मनुष्यस्य, भार्या श्रेष्ठम सखा।

भार्यामूलं त्रिवर्गस्य, भार्या मूलं तरिश्यतः।।[10]

अन्ततः यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन संस्कृत साहित्य में कहीं पर नारी की प्रंशसा की गई है तथा कहीं पर नारी की निन्दा की गई है।

भास, कालिदास तथा शूद्रक के नाटकों में नारी का रूप, समाज में नारी की स्थिति, नारी एवं शिक्षा तथा सामाजिक व आर्थिक स्वतन्त्रता-

नारी का मातृ-रूप -

सस्ंकृत साहित्य में माता को अत्यन्त सम्मानजनक स्थान दिया गया है। 'महाभारत' में कहा गया है कि आचार्य सदा दस श्रोत्रियों से बढ़कर है, पिता दस उपाध्यायों से अधिक महत्व

www.ignited.in

रखता है और माता की महत्व दस पिताओं से भी अधिक है।अतः माता के सिवाय कोई दूसरा गुरू नहीं है।[11]

माता देह दात्री होने के साथ साथ ज्ञानदात्री भी है। वह बच्चों का पहला और सबसे बड़ा गुरू है।[12]

नारी का वैदिक युगीन देवी पद लुप्त हो चुका था, फिर भी समाज में माता को आदर की दृष्टि से देखा जाता था। नारी का स्थान परिवार में मातृत्व के आधार पर निश्चित होता था। माता को देवता से भी अधिक पूजनीय माना जाता था।[13] माता के लिए अकरणीय कार्य भी किए जा सकते थे। मध्यमव्यायोग में घटोत्कच माता के व्रत के पाराणर्य ब्राह्मण की हत्या करने को तैयार हो जाता है।[14] कर्णभार में कर्ण माँ के कहने पर युद्ध के प्रति विरक्ति की आंशका से युक्त हो जाता है।[15]

माँ भी सन्तान के प्रति अपना कर्तत्व पूरा करती थी। निःसंतान स्त्री का जीवन व्यर्थ माना जाता था। विक्रमोर्वशीयम् में पुरूरवा उर्वशी को पुत्रवती का स्वागत है ऐसा कहकर आसन पर बैठाया जाता है।[16] पुत्र दर्शन मात्र से ही माँ का रोम-रोम पुलकित हो उठता था।[17] यही उसके मातृत्व की सार्थकता थी। माता को सर्वपूज्या माना जाता था।

पत्नी रूप

माता का ही दूसरा रूप पत्नी है। पत्नी को ही परिवार में गृहिणी पद प्राप्त होता है। कुटुम्बिनी[18] शब्द से यह स्पष्ट होता है कि नारी का कार्य परिवार तक ही सीमित था। वह गृह-स्वामिनी होती थी। वह घर की आन्तरिक व्यवस्था की ठीक रूप से देख-रेख तथा संचालन करती थी। परिवारिक समस्याओं के विषय में पति-पत्नी से विचार विर्मश करता था। "प्रतिज्ञायौगन्धरायण" में राजा महासेन अपनी पुत्री के विवाह के विषय में पत्नी से राय लेता है।[19] पत्नी अपने पति के लिए महान त्याग करने को तैयार रहती थी। "स्वप्नवासवदत्तम्" में वासवदन्ता अपने पति के उत्कर्ष हेतु समस्त राजसी-ऐश्वर्य का त्याग करके प्रच्छन्न वेश में रहती है और अपने पति का विवाह पद्मावती के साथ करने को तैयार हो जाती है[20] "प्रतिमानाटकम्"[21] में सीता वन जाते हुए राम का अनुसरण करती है। पत्नी पति की सहधर्मचारिणी होती थी।[22] अभिज्ञानशाकुन्तलम्[23] में पत्नी को गृहिणी पद से सुशोभित किया गया है।

मृच्छकटिकम् में नारी साक्षात् त्याग की प्रतिमूर्ति है। धूता, पति को चारी के कलक से बचाने के लिए अपनी बहुमूल्य रत्नावली देती है। इससे प्रतीत होता है कि वप्र्य युगीन संस्कृति में नारी को उन्नत स्थान प्राप्त था।

कन्या/पुत्री रूप

नारी का प्रथम रूप कन्या अथवा पुत्री है। वप्र्य युगीन संस्कृति में नारी विवाह से पूर्व सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से परतन्त्र थी। कन्या जन्म प्राचीन युग से ही दुःखद माना जाता था। पिता अविवाहित पुत्री के लिए चिन्तित रहता था।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् में कन्या को परायाधन कहा है। जिसे माता-पिता न्यास रूप समझते है। जन-सामान्य कन्या के विवाहोपरान्त उसी तरह निश्चिन्त हो जाता था, जिस तरह कोई व्यक्ति न्यास लौटाकर निश्चित हो जाता है।[24] कालिदास ने मनु की तरह स्त्री स्वतन्त्रता को वर्जित बताया है। विवाहोपरान्त कन्या पर पति की सर्वतोन्मुखी सत्ता रहती थी।[25] वैवाहिक चिन्ताओं के कारण ही कन्या जन्म को दुःखद माना जाता है।

विधवा के रूप में नारी

विधवा शब्द से यह स्पष्ट होता है कि पति की मृत्य नारी के जीवन का महान् दुर्भाग्य था। विधवा शब्द से तात्पर्य है विगतः धवः अर्थात् पति रहित।

स्त्रियों के लिए वैधव्य अभिशाप स्वरूप था। विधवा को समाज में हेय समझा जात था। 'दूतद्यतोत्कच' में अभिमन्यु का वध हो जाने पर धृतराष्ट्र दुर्योधन आदि अपने पुत्रों को कहता है कि अनेक पुत्रों वाले इस कुल में सौ पुत्रों से भी अधिक प्यारी केवल एक पुत्री है और वह तुम भाइयों की कृपा से निन्दनीय वैधव्य को प्राप्त करेगी।[26] इससे यह प्रतीत होता है कि विधवा का समाज में कोई विशेष स्थान नहीं था। 'पंचरात्रम्' में वृज्ञ गोपालक गोपर में वृद्ध गोपालक गोप-युवतियों को ऐसा ही आशीवार्द देता है।[27] दूसरे की पत्नी को विधवा बनाने वाला अपनी पत्नी के लिए वैधव्य मोल लेता था। विधवा का वेश पृथक् होता था। उसका जीवन तपस्विनी नारी की तरह होता था।[28]

कालिदास के नाटक मालिविकाग्निमित्रम् में 'पुनर्नवीकृत वैधव्य दुखया'[29] कहने से विधवा की दयनीय अवस्था स्पष्ट होती है। "मृच्छकटिकम्" में चारूदत्त की पत्नी धूता अपने पति के मृत्युदण्ड का समाचार सुन कर अग्नि में प्रविष्ट होने का निश्चय करती हैं।[30] इससे यह स्पष्ट होता

है विधवा को समाज में कोई आदरणीय स्थान प्राप्त नहीं था। विधवा के रूप में जीवित रहने से वह मृत्यु को प्राप्त नहीं था।

वेश्या या गणिका के रूप में नारी

नारी का वेश्यारूप वैदिक काल से ही समाज में प्रचलित है। भोग-विलास के मद में मस्त राजाओं के भवनों में गणिकाएँ सदा रहती थी।

वेश्या शब्द की उत्पति पर हृदयं विवश्यतीति वेश्या यद्वा वेशन जीवतीति वेश्या।[31] वेश्याओं को समाज में घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। इन्हें धन के लिए हंसने वाली व धन के लिए रोने वाली, धन के लिए पुरूषों को विश्वास दिलाने वाली व स्वयं विश्वास न करने वाली कहा जाता था।[32]

लेकिन सभी गणिका केवल धन की ही इच्छा करने वाली नहीं होती थी। कुछ धन की अपेक्षा गुणों सम्मान करने वाली होती थी।[33] उदाहरण वसन्तसेना। वह धनहीन परन्तु सदाचारी चारूदत से प्रेम करती थी। और धनसम्पन्न राजश्यालक से घृणा करती थी[34] भास ने वसन्तसेना और चारूदत्ता को प्रेमिका और प्रेमी के रूप में चित्रित किया है।

इससे यह स्पष्ट होता है कि वेश्या को उसे समय घृणित तो अवश्य समझा जाता था। परन्तु अछुत नहीं समझा जाता था। क्योकि नगर के प्रसिद्ध एवं श्रेष्ठ व्यक्ति भी वेश्याओं से सम्बन्ध रखते थे।

समाज में नारी की स्थिति

सती-प्रथा स्त्रियों का शैक्षिक स्तर ऊँचा होने पर भी उन्हें समाज की यातनाएँ झेलनी पड़ती थी। स्त्रियां विधवा जीवन व्यतीत करना उचित नहीं समझती थी वे पति के साथ सती हो जाती थी।[35]

मृच्छकटिकम् में पतिव्रता धूता अपने पति की मृत्यु का समाचार सुनने से पूर्व ही अग्नि में प्रवेश करना चाहती है।[36]

पर्दा प्रथा

प्रस्तुत नाटकों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि पर्दा-प्रथा का भी समाज में अस्तित्व था। "प्रतिमानाटकम्" में सीता वन-गमन के समय मार्ग में घूघँट निकाल कर चलती है।[37] 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' में शाकुन्तला तपस्वियों के साथ दुष्यन्त के दरबार में अवगुण्ठनवती होकर जाती है। उसको देखकर राजा दुष्यन्त "कास्विदव-गुष्ठनवती नाति परिस्फुट शरीर लावण्या कहता है।[38]

उस समय अवगुण्ठन समाज में नारी की विनय शीलता और लज्जा का प्रतीक समझा जाता था। जब दुष्यन्त शकुन्तला से विवाह करने की बात को स्मरण नहीं करता तो गौतमी ने शाकुन्तला को लज्जा का त्याग कर घूँघट हटाने के लिए कहा।[39]

शिक्षा और नारी

शिक्षा के क्षेत्र में नारी प्रगति के पथ पर थी। नारी शिक्षा पुरूष शिक्षा के समान ही आवश्यक था। नारी को आदर्श पत्नी एवं विदुषी बनाने के लिए स्त्री शिक्षा आवश्यक मानी गयी। शैक्षिक क्षेत्र में नारी स्वतन्त्र थी।

'प्रतिज्ञायौगन्धरायणम्' में वासवदत्ता का वीणावादन की शिक्षा गृहण करने का उल्लेख है।[40] महाकति कालिदास के नाटकों में भी अनेक शिक्षित नारियों का उल्लेख मिलता है। शाकुन्तला की सखियाँ उससे दुष्यन्त को पत्र लिखवाती है। यह पत्र उसके शिक्षित होने का प्रमाण है।[41] इसी प्रकार अभिज्ञान शाकुन्तलम् में शाकुन्तला की दोनों सखियां अनसूया और प्रियवंदा भी शिक्षित प्रतीत होती है। क्योकि वे दुष्यन्त की नामांकित मुद्रिका से दुष्यन्त का नाम पढ़ती है।[42] उस समय शिक्षा के साथ-साथ नारी को ललित कलाओं की शिक्षा भी दी जाती थी।'मालविकाग्निमित्रम्' में मालविका को नृत्य विशारदा कहा है- 'भो वयस्यु न केवल रूपे शिल्पे अप्यद्वितीया मालविका'[43] शूद्रक के मृच्छकटिकम् में शिक्षित नारी का तो उल्लेख नहीं लेकिन वसन्तसेना को विभिन्न कलाओं में दक्ष बताया गया है।[44]

अन्ततः यह स्पष्ट होता है कि भास, कालिदास एवं शूद्रक के समय स्त्रियों को दो प्रकार की शिक्षा दी जाती थी पढ़ने लिखने की शिक्षा और संगीत आदि विभिन्न कलाओं की व्यवहारोपयोगी शिक्षा

स्वतन्त्रता और नारी

स्वतन्त्रता का अर्थ है कि स्व-अपना, तन्त्र-शासन होना। अर्थात् किसी व्यक्ति को स्वेच्छा से जीवनयापन करने की अनुमति होना। वैसे तो समाज में रहते हुए कोई भी व्यक्ति पूर्ण रूप से स्वतन्त्र नहीं रह सकता। उसे सामाजिक मर्यादा के अनुसार ही कार्य करना होता है। भास, कालिदास और

शूद्रक के समय नारी सामाजिक व आर्थिक दृष्टि से परतन्त्र थी

सामाजिक स्वतन्त्रता

भास ने नारी के लिए पति को ही सर्वस्व कहा है। 'प्रतिमानाटकम्' में सीता ने राम के साथ वन में जाने की इच्छा व्यक्त की तो लक्ष्यण ने कहा "मर्तृनाथ हि नार्यः"[45] कि पति ही स्त्री का स्वामी है। जब पति वन में जा रहा है तो पत्नी को भी अवश्य वन में जाना चाहिए। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि स्त्री का अपना कोई स्वतन्त्र व्यक्तित्व नहीं था।

मध्यमव्यायोग में केशवदास ब्राह्मण राक्षस को अपना शरीर देकर अपने परिवार की रक्षा करना चाहता है। लेकिन उसकी पत्नी कहती है कि पतिव्रता स्त्री के लिए पति ही धर्म है। इसलिए परिवार की रक्षा के लिए मैं अपना शरीर राक्षस को देना चाहती हूँ।[46]

आर्थिक स्वतन्त्रता महाकवि भास के समय में स्त्रियां अर्थोपर्जन नहीं करती थी। लेकिन गणिका स्वयं अर्थोपार्जन करती थी और वे समृद्धिशलिन होती थी। वसन्तसेना नामक गणिका को चारूदतम् तथा 'मृच्छकतिकम्' नाटक में धनसप्पन्न दिखाया गया है। लेकिन गणिका की स्थिति सामान्य नारी पर लागू नहीं हो सकती।

"अभिज्ञानशाकुन्तलम्" में सेठ धनमित्र की सम्पति राजकीय होने वाली थी, क्योंकि निःसन्तान होते हुए उसकी मृत्यु हो गई थी। इससे प्रतीत होता है कि पत्नी अपने पति की सम्पति की स्वामिनी तो नहीं थी, परन्तु उस सम्पति का उपभोग अवश्य करती थी।[47]

शुद्रक के समय भी नारी अर्थिक विषयों में पति पर अवलम्बित थी। विवाह के समय प्राप्त उपहार आदि पर ही स्त्री का पूर्ण रूप से अधिकार होता था। जिसे स्त्री धन कहा जाता था।[48]

इस प्रकार उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भास, कालिदास और शूद्रक के समय स्त्रियां सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से पुरूषों के समान स्वतन्त्र नहीं थी।

निष्कर्ष

उपरोक्त विवेचन से निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि महाकवि कालिदास, भास तथा शूद्रक के समय में समाज में नारी की सामाजिक स्थिति प्रायः समान थी। जैसें-सती प्रथा, पर्दाप्रथा तथा सामाजिक व आर्थिक स्वतन्त्रता।

उस समय सती प्रथा तथा पर्दा प्रथा का प्रचलन था और स्त्री को पुरूष के समान स्वतन्त्रता नहीं थी उसे पिता, पति तथा पुत्र के अधीन रहना पड़ता था तथा वह अर्थोपार्जन नहीं करती थी। अर्थोपार्जन का कार्य पुरूष करते थे।

लेकिन आज बदलती परिस्थितियों के साथ सामान्य जनजीवन में प्रचलित संस्कृतियां भी बदलती गयी। सती प्रथा आज प्रायःमृत हो गई है लेकिन पर्दा प्रथा आज भी अनेक स्थानों पर देखने को मिलती है। स्त्री सामाजिक तथा आर्थिक रूप से भी स्वतन्त्र है। वह हर क्षेत्र में पुरूष के साथ कंधा से कधा लगाकर कार्य कर रही है।

सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

1. वोमेन ईन संस्कृत ड्रामाः रत्नमयी दीक्षित पृष्ठ-15
2. ऋग्वेद - 5.61.6
3. ऋग्वेद - 5.61.7
4. स्त्रिया अशस्यं मनः। उतो अह कुतुम रघुम-ऋ 8.33.17
5. ऋग्वेद 10.95.15
6. नाट्यशास्त्र- 20.93
7. मनु-3.56
8. अद्र्धो हवा एव आत्मनोयज्जाया। शतपथ ब्राह्मण 5.1.6.10
9. शतपथ ब्राह्मण - 15.1.1.31
10. आदि पर्व - 74.41
11. महाभारत शन्ति पर्व -108.17
12. हिन्दू परिवार भीमांसा छठा अध्याय-पृष्ठ 165
13. मध्यमव्यायोग-माता किल मनुष्यार्ण देवतानां च दैवतम्
14. अकार्यमेतच्च मयाऽद्य कार्य मातुर्नियोगादपनीय शड्काम् 1.8
15. अयं से कालः पुनश्चयातुर्वचनेनवारितः कर्णभारम्-1.8

16. विक्रमोर्वशीय - 5.12 पृष्ठ -248
17. विक्रमोर्वशीय-5.12
18. अद्य अर्धरात्रेडस्माकम् कुटुम्बिन्या यशोदा-बालचरितम
19. ऐते नानापैलोभयन्तें गुणैर्गा कस्तें वैतेषा पात्रता पात राजा प्रतिज्ञायौगन्धरायण 2.8
20. स्वप्नवासवदतम् - 1.7
21. ब्रजतु चरतु धर्ममर्तृनाथा हि वार्यः- प्रतिमानाटयम् - 1.25
22. ननु सहधर्मचारिणी खल्वहम् - प्रतिमानाटयम् - 1.29
23. अभिजनवतों भर्तुः श्लाघ्ये स्थिता गृहिणीपदे - प्रतिमानाटयम् 4.49
24. अभिज्ञानशाकुन्तलम् 4.22
25. उपपन्ना हि दारेषु प्रभुषा सर्वतामुखी - प्रतिमानाटयम् 5.26
26. दूतघतोत्कच-1.16
27. अविधवाश्च गोपयुवतयो भवन्तु - प्रतिमानाटयम् पृ॰ 389
28. दूतवाक्यम्-पृ. 9 येनेदानी वध्वै उत्तरायै वैघव्य दत्तै, तेनात्मनो युवतिजनाय वैधव्यतादिष्टम्।
29. मालविकाग्निमित्रम-पंचम अडक्
30. मृच्छकटिकम् - दशम् अडक
31. चाज्ञ. स्मृति - 1.141
32. मृच्छकटिकम् - 4.14
33. मृच्छकटिकम् - 4.14
34. मृच्छकटिकम् - 8.32
35. एककृतप्रवेशनिश्चया न रोदिमि। उरूमडग्म् पृ 38
36. प्रतिमा - पृ. 44
37. अभि. शा. 5.13
38. अभि. शा. - 5 अड्क
39. प्रतिमा. द्वितीया अड्क पृष्ठ -52
40. अभि. शाकु. तृतीयाड्क- पृष्ठ – 48
41. अभि. शाकु –प्रथमअडक
42. मालविकाग्निमित्रम्-द्वितीय अडक
43. मृच्छकटिकम् - 1.42
44. प्रतिमानाटम् - 1.25
45. आर्य मा मैवम्! पतिमात्र धर्मिणी पतिवृतेति नाम। गृहित फलेनैतेन शरीरेणार्थ कुलं च रक्षितुमिच्छामि मध्यमव्यायोग-प्रथमअडक्
46. अभिज्ञानशाकुन्तलम् षष्ठम् अडक्
47. आत्म भाग्यक्षत स्त्री प्रव्येणा नुकम्पितः मृच्छकटिकम् - पृ0 3.27

Corresponding Author

Suman*

M.A. in Sanskrit, M.Phil, Ph.D, UGC Net and JRF

pankajgurjar54@gmail.com